March, 2017
Volume-6, Issue-21
ISSN 2278-4381

SHANTI E JOURNAL OF RESEARCH

Most Referred & Peer Reviewed
Multi Disciplinary E Journal of Research

CHIEF EDITOR

CO-EDITOR
SHARMA

EXECUTIVE EDITOR

वैदिक शिक्षा समावलोकन

डॉ. महेन्द्रकुमार ग. दवे
एसोसिएटप्रोफेसर, साहित्यविभाग
श्रीसोमनाथसंस्कृतयुनिवर्सिटी, वेरावळ

सृष्टिके आदिमें ऋषियों द्वारा दृष्ट ईश्वरीय ज्ञान वेद समस्त नैतिक मूल्यों का जन्मदाता है। संस्कृत व्याकरणके अनुसार 'शिक्षण शिक्षा' में शिक्ष धातु से भावमें अङ् प्रत्यय करने पर प्रातिपदिक संज्ञा द्वारा स्त्रीत्वविवक्षामें अङ् प्रत्यय से निष्पन्न शिक्षा शब्दका ज्ञानोपार्जन अर्थ प्राप्त होता है। विद् ज्ञाने से निष्पन्न इस शब्दका व्याप विस्तृत हुआ है। श्वेताश्वतरोपनिषद् में तो कहा है कि ' सर्वो नियन्ता विश्वकर्मा प्रभु के संकल्प से जड प्रकृतिमें सर्वप्रथम चेतनाबुद्धि (ज्ञान) उत्पन्न होती है कि 'मैं बहुरूप सृष्टि का सर्जन करूं '2 जड पदार्थोंको जागृत या उदबोधित करनेकी बात यजुर्वेदमें भी मिलती है।3 जिससे वर्णादि का उच्चारण सीखा जाय, उसे शिक्षा कहते है। अथवा जो सीखे जाय वे वर्णादि ही शिक्षा है।4

'शिक्ष विद्योपादाने ' धातु से विद्या-ग्रहण अर्थ में शिक्षा शब्दका प्रयोग भारतीय शास्त्रोंमें होता है। माण्डुक्योपनिषद् में वेदचतुष्टयके अनन्तर षड् वेदाङ्गो का उल्लेख मिलता है। 5भारतीय संस्कृतिके पोषक वेद वेदाङ्गोमें शिक्षाको पवित्रतम साधन मानते हुए ज्ञान और शिक्षाकी महिमा को वर्णित किया गया है। ' न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते। 6 कहकर श्रीमद् भगवद् गीतामें श्रीकृष्णने ज्ञानको पवित्रतम घोषित करते हुए उसे निःश्रेयस प्राप्ति का मार्ग बताया हैं तथा " श्रद्धावान् लभते ज्ञानम् "।7 कहकर गीताकारने श्रद्धाभाव बिना ज्ञान का दोहन न होनेको कहा हैं। 'आचार्यवान् पुरुषो वेद:' 8 इस स्मृतिवाक्यसे समस्त वैदिक वाङ्गमयमें इष्ट प्राप्ति अनिष्ट परिहार के मार्ग प्रशस्तकरण का साधन गुरुको मान हैं। महानारायणोपनिषद् में तो 'गुरुको साक्षात् नारायण स्वरूप कहा हैं"।9 आचार्य से ही विद्या फलीभूत हो ने का भी स्मृतिमें मिलते हैं।10 अथर्ववेदमें भी सदाचार के महत्त्व पर श्रेष्ठ पुरुष (आचार्य) अपने शुद्धाचरणसे मृत्यु को दूर करते हैं। ऐसा शुद्धाचरणसे शिक्षार्थी को वेदविहित वचनामृत द्वारा धर्मोपदेश देने को कहा हैं।

' वेदोऽखिलोधर्ममूलम्' इस स्मृतिवाक्यमें समस्तवेदकि धर्मका विधेय कर्मोका विविध दार्शनिक चिन्तनों का मूल माना हैं। ऋग्वेदमें अपने शिष्यों और पुत्रों के प्रति धर्म और ब्रह्मका उपदेश दिया ऐसा विधान मिलता

---

1 सिद्धान्त कौमुदी अदादिगण में धातुसंख्या-१०६४.

2 अजामेकां लोहित शुक्ल कृष्णां बह्वी: प्रजा: सृजामानां सरुपाम् ॥ श्वेताश्वतरोपनिषद्-४-५.

3 उद् बुध्यमाने प्रति जागृहिं ....। यजुर्वेद:- ३-१.

4 शिक्षा शिक्ष्यतेऽनयेति वर्णाद्युच्चारण लक्षणम्।
शिक्षन्त इति वा शिक्षा वर्णादय। शिक्षैव शिक्षा ॥ - ....शांकरभाष्य तैत्तिरीयोपनिषद्- १-२.

5 मांडूक्योपनिषद्- १-१-५.

6 श्रीमद् भगवद् गीता- ४-३८.

7 श्रीमद् भगवद् गीता-४-३९.

8 छांदोग्योपनिषद्- ६-१४-२.

9 गुरु: साक्षादादि नारायण: पुरुष:। महानारायणोपनिषद्-३-२-५

10 आचार्याद्धैव विधा: । -छांदोग्योपनिषद्- ४-९-३.

ISSN :2278-4381

हैं । कठोपनिषद् में शिष्यप्रति "आचार्य उपनीति ब्रह्मचारी को तीन रात्री तक अपने उदरमें रखता हैं । इसमें छिपाकर कोई तत्त्वज्ञान नहीं रखता ।

यजुर्वेदमें ज्ञान स्वरुप परमेस्वर से श्रेष्ठ ज्ञान प्रदान करनेकी प्रार्थना द्वारा नेत्र विहीन अंधे का समाजमें कोई आदर नहीं होता ' इस कथनको पुष्ट करता हैं ।[11] महर्षिने 'ईश्वरसे समस्त मानव –प्रजाओं को ज्योति-विवेक प्रदान करनेकी अर्चना की हैं । इस प्रकार सम्पूर्ण वाङ्मयमें अविद्या (अज्ञान) का नाश और श्रेष्ठ ज्ञानकी प्राप्ति के लिये प्रार्थना की गई हैं ।[12] शिक्षाकी समाप्ति पर गुरु अपने शिष्य को उपदेश देते हुए कहते हैं कि " सत्य बालो,धर्मका आचरण करो ,नित्य स्वाध्यायमें प्रवृत्त रहो , माता-पिता और आचार्य को देवतुल्य समझो ,यहीं शिक्षा का मूलमंत्र हैं ।[13] एवं शिक्षाध्याय में पारिवारिक और सामाजिक कर्तव्यो का भी निर्देश किया गया हैं । स्वाध्याय के द्वारा त्रिगुणातीत फल की प्राप्ति होती हैं । इसलिये प्रतिदिन स्वाध्याय अवश्य करना चाहिए ।[14]बुद्धि,स्वास्थ्य,धन, कल्याणकी अभिवृद्धिका मार्ग प्रशस्त किया हैं । इनमें उन्होंने न्याय - मिमांसा ,वेद – पुराण को विशेष बुद्धिवर्धक माना हैं । शेषके लिये आयुर्वेद,ज्योतिष, योगशास्त्र,अर्थशास्त्रका स्वाध्याय आवश्यक माना हैं । [15]

तात्पर्य यह हैं कि सद्ज्ञानको पुन: पुन: परिशीलन द्वारा जीवनमें उतारा जाता हैं । उतनी हि जीवनमें मधुरताऔर सफलता आती-जाती हैं । तथा प्राप्तज्ञान जनहित के लिये श्रेयस्कर और कल्याणकारी सिद्ध होता हैं । विशुद्ध आचार-विचार की शिक्षा का आदान –प्रदान करना ही ऐहलौकिक और परलौकिक हित का परमसाधन स्मृति वाक्यमें माना हैं । [16] बृहदारण्यकोपनिषद् में आत्मा श्रवण ,मनन और निदिध्यासन से ही जानी जाती हैं ,ऐसा कहा गया हैं । [17]

यजुर्वेदमें कहा गया हैं कि 'वाणी का स्वामी परमेश्वर मुझे और मेरी वाणी को पवित्र करके माधुर्ययुक्त और कोमल बनाये ।[18] विद्या महान गुरुके समान हैं अर्थात् विद्या द्वारा ही मानवके अंतर्चक्षु प्रकशित होते हैं । तथा नैसर्गिक गुणों की परिशुद्धि होती हैं विद्वान् ,कवि,शास्त्रज्ञ, संगीतज्ञ,विदूषक , इतिहासकार और पुराणवेत्ता ये राजसभा के सात महत्त्वपूर्ण अङ्ग हैं । [19] संसार में सम्बन्ध उपकरणों को प्रदान करते हुए पृथ्वी वासियोंकी समस्या का समाधान के बारें मे यजुर्वेदमें कहा हैं । [20]

---

[11] अग्ने सूपायनो भव । यजुर्वेद:- ३-२४.

[12] विश्वं ज्योतिर्यच्छ । यजुर्वेद:- १५-५८

[13] सत्यं वद । धर्मं चर । स्वाध्यायान्मा प्रमदा; । मातृदेवो भव । पितृ देवो भव । आचार्य देवो भव ।- तैत्तिरीयोपनिषद्-१-११

[14] यावन्तं हवाऽइमॉ पृथिवीं वित्तेन पूर्णाददन्लोकं जयति त्रिस्तावन्तं जयति भूयां सां चाक्षयं य एवं विद्वान हरह: स्वाध्यायमधीयते तस्मात्स्वाध्यायोऽध्येतव्य: ।- शतपथ ब्राह्मण: -११-५-६/३

[15] बुद्धि वृद्धि कराव्याशु धन्यानि च हितानि च नित्यं शास्त्राण्यवेक्षेत निगमां श्चैव वैदिकान् । - विष्णुधर्मोत्तर पुराणम्-३- २३३.

[16] उपनीय गुरु:शिष्यं महाव्याहृति पूर्वकम् ।
वेदमध्यापयेदेनं शौचाचाराण्श्च शिक्षयेत् ॥ याज्ञवल्ययस्मृति:- १-१५.

[17] आत्मनो वा अरे दर्शनेन मत्याविज्ञानेनेदं सर्वं विदितम् – बृहदार्णकोपनिषद्- २-४/५

[18] वाक्पति र्मा पुनातु । - यजुर्वेद:- ४-४.
वाचस्पति र्वा च न स्वदतु । -यजुर्वेद:- ११-७.

[19] विद्वांस: कवयो: भट्टा गायका: परिहासका : ।

अग्निपुराणमें भी विद्या याने कवित्व शक्ति की उत्कृष्टता बताई है।[21]

शिक्षाका क्षेत्र व्यापक है १८ विद्याओं और ६४ कलाओं की बात संस्कृत साहित्यमें मिलती है। आज व्यक्ति अनेक विकारों और व्यसनों मे जुडा हुआ है तब शिक्षाके माध्यममे संस्कारों में परिशोधन और परिवर्धन करते हुए आध्यात्मिक और सामाजिक अभिवृद्धि के लिये समुचित वातावरण तैयार करना आवश्यक है। तैत्तिरीयोपनिषद् में शिक्षाग्रहणके साथ अनेक सद्गुणोंके उपार्जन का भी उपदेश दिया गया है। दम, मन,संयम, शम,इन्द्रियनिग्रह, अग्नि और अग्निहोत्र जैसे शिक्षाग्रहण काल प्रथम आश्रममें आवश्यक माना है।[22] श्रुति में कहा गया हैं की ज्ञानी ,तेजस्वी और रक्षक –समाजोत्थानमें यशस्वी बनें ।[23] और वेद ,धर्मशास्त्र,सदाचार और आत्म-तुष्टि इन चारों को प्रमाण माना हैं ।[24] वैदिक वाङ्मय में भी सदाचार, और शिष्टाचारके पालनार्थे मानवीय गुणोंके आधारभूत सिद्धांतो के बारे में महर्षियोंने कही हुई सात मर्यादाओंमें से एक को ही अपने जीवनमें उतारने वाला व्यक्ति ब्रह्मसे स्थित होता हैं।[25]

मनीषियोंने मानवके सर्वांगिण विकास हेतु सरास्वती की प्रार्थना करते हुए वें पवित्रता प्रदान करनेवाली मानी हैं , वे विद्या ,अन्न, और शक्ति प्रदान करके बुद्धिपूर्वक किये कार्यो को सम्पन्न करती हैं।[26] वैदिक धर्मानुसार बालक के सर्वाङ्गिण विकासके लिये माता-पिता ही प्रथम भूमिका निभाते हैं। बालक को समुचित विद्या प्राप्ति के लिये गुरु आश्रममें भेजनेके विकल्प में पिता ही अपने ब्रह्मचारी पुत्रको वेदाध्ययन की शिक्षा प्रदान करते हैं ।[27] माता-पिता ही ईश्वर होनेका भी प्रमाण मिलते हैं ।[28] तथा ऋग्वेदमें कहा हैं कि 'हे प्रभु ! तेरी स्तुतिके योग्य ज्ञानमयी बुद्धि हमारें में स्थिर हो।[29] मनकी स्थिरता से सर्व शिक्षा सबवस्तु प्रतीत

इतिहास पुराणाज्ञा: सभासप्ताङ्ग संयुता ॥ - सुभाषितरत्नभाण्डागारम्- १०१-२

20 द्यां मा लेखीरन्तरिक्षं मा हिं सी : पृथिव्या: सम्भव: ॥ यजुर्वेद: - ५-४३, तथा ६-२.

21 नरत्वं दुर्लभं लोके विद्यास्तत्र सुदुर्लभा: ।
कवित्वं दुर्लभं तत्र शक्ति: तत्र सुदुर्लभा: ॥ - अग्निपुराणम्- ३२७/३

22 तैत्तिरीयोपनिषद्- ९-१.

23 सूरिरसि वर्चो धा असि तनूपातोऽसि ।
आप्नुहि श्रेयांसम् अति समं काम ॥ अथर्ववेद: - ६-१३३-३

24 वेद: स्मृति,सदाचार: स्वस्थ च प्रियमात्मन: ।
एतद् चतुर्विधं प्राहु साक्षात् धर्मस्य लक्षणम् ॥ -- मनुस्मृति:- २-१२

25 सप्त मर्यादा कवयस्ततक्षु: तासामेकामिदभ्यं हुरो गात् ।
अयो ह स्कम्भ उपमस्यनीडे पथां विसर्ग धुरुणेषुतस्थौ ॥ ऋग्वेद: १०-५-६- तथा-अथर्ववेद: -५-१-६.

26 पावका न: सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती ।
यज्ञं वेष्टु धियावसु ॥ ऋग्वेद:- १-१-१०.

27 येन देवा स्वरारूरूहुर्हित्वा शरीरममृतस्य नाभिम् ।
तेन गेष्म सुकृतस्य लोकं धर्मस्य व्रतेन तपसा यशस्य व: ॥ - अथर्ववेद: -- ४-११-६

28 त्वं त्राता तरणे चेत्यो भू: पिता सदमिन्नानुषाणाम् ॥ -- ऋग्वेद:- ६-१-५.

29 इयं ते नव्यसी मतिरग्ने: अधाय्यस्मदा ॥ - ऋग्वेद:- ८-७४-७.

होती हैं । अत: मन को कल्याणकारी होने की प्रार्थना मिलती हैं ।[30] मनका परिशीलन अनुसार ही मानवव्यक्तित्वका निर्माण होता हैं। बुद्धि मानवकी निर्मात्री होनेको भी कहा हैं ।[31] चाणक्यने भी 'जैसी बुद्धि वैसा ऐश्वर्य ' ऐसा कहा हैं ।[32]

"न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते ।"[33] कृष्णने ज्ञानको विशेष पवित्र करनेवाला कहा हैं ।और मोक्ष का माध्यम ही ज्ञान हैं । ज्ञान का साधन विद्या हैं। उपनिषदों मे शब्दात्मक शास्त्रीय विद्या को अविद्या और आत्म बोध कराने वाली विद्याको विद्या या परा विद्या कहा गया हैं ।[34] विद्या सुख-शान्ती और आत्मकल्याण करती हैं। वेद्यासे देवलोक और कर्म से पित्यृलोक की प्राप्ति होने को कहा हैं ।[35] और कहा हैं कि जो आत्मज्ञान एवं प्राकृतिक विज्ञान को एकत्र जानकर प्रकृति विज्ञानके माध्यमसे मृत्युंको दूर करके आत्मज्ञान से अमरत्व प्राप्ति करता हैं ।[36]

तात्पर्य यह हैं की आत्मज्ञान और सृष्टिविज्ञान दोंनो विद्याएँ मनुष्यको उन्नति प्रदान करती हैं । और सत्य या ने ज्ञान का मुख स्वर्ण पात्रसे ढका हुआ भी माना गया हैं ।[37] सत्यके केन्द्रसे ज्ञान फैलि हुए हैं ऐसा ऋग्वेदीय महर्षियोने कहा हैं ।[38] समस्त मानवजाती और समाजका अभ्युदय और नि:श्रेयस् के लिये आचारशिक्षा को भी जरूरी माना हैं ।[39] महर्षिने कहा हैं कि समस्त मानव समाज को व्यावहारिक जगतमें मिलकर रहने – चलने,बोलने और सोचने का निर्देश देकर संगठन के महत्व को समझाते हुए संघीय शक्ति का बोध कराया हैं ।[40] इसके द्वारा 'संघ शक्ति कलौ युगे' को अनुमोदन मिलता हैं। ऐसे समस्त सदस्योंके परस्पर जुडे रहने की सद्भावना वेदो में मिलती हैं। और कर्म करते रहकर मनुष्य सो वर्ष जीता हैं ।[41] एसा कहकर कर्मकी प्राधान्यता भी जताई गयी हैं । वेदोमें शिक्षाका आत्मकल्याण के लिये तो अभ्यास होने को कहा हैं । साथ-साथ शिक्षासे धार्मिक संस्कारों, व्यक्तित्वविकास,सदाचार और शीलत्व प्राप्ति होनेके साथ आचरण ,शुद्धता,सत्यपालनता ,अहिंसाका प्रशिक्षण और कौटुम्बिक एवं राष्ट्रिय एकत्व की प्राप्तिकी भावना भी प्राप्त होती हैं ।

---

30 यस्मिन्नृच: साम यजूंषि ---- तन्मे मन: शिव संकल्पमस्तु ॥ – यजुर्वेद:- ३४-५/६

31 त्वं विष्णो सुमतिं विश्वजन्याम् ___ रथ्वावत : पुरुश्चन्द्रस्य राय : ॥ – ऋग्वेद: – ७/१००/२.

32 "यथा श्रुतं तथा बुद्धि: ॥ चाणक्यसूत्रम् -- ४५९

33 श्रीमद् भगवद् गीता- ४/३

34 अन्यदेवाहु विद्ययान्यदाहुरविद्यया । - ईशावास्योपनिषद्- १०

35 अथ त्रयो वाच लोका –मनुष्यलोक: पितृलोको देवलोक: इति सोऽयं मनुष्यलोक पुत्रणैव जय्योनान्येन कर्मणा पितृलोको प्रशस्यति ॥ --बृहदारण्यकोपनिषद्- १-५-१६.

36 विद्यां चाविद्यां च यस्तेद्वेदो भवं सद् ।
अविद्यां मृत्युं तीर्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते ॥ यजुर्वेद: - ४०/१४ तथा ईशावाश्योपनिषद्- १४

37 हिरण्यमयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम् । -- यजुर्वेद:-- ४०-१५ तथा ईशावास्योपनिषद् - १५

38 प्र ब्रह्मैतु सदनाहृतस्य । ऋग्वेद ७-३६-१

39 आदित्यैरास्रासि । - यजुर्वेद: - १-३०,११-५९

40 सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम् ।
देवा भागं यथा पूर्वं संजानाना उपासते ॥ -- ऋग्वेद: - १०-१९१-२.

41 कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छत् समा : ॥ यजुर्वेद: -- ४०/२